**** अध्याय नं.5 ****

धूमिल के काव्य में राजनीतिक परिप्रेक्ष्य -

साहित्य एवं चित्रकला में दृशों, पदार्थों का व्यक्तियोंपर ऐसा अंकन या चित्रण होता हैं या किया जाता हैं जिसमें पारस्पारिक अंतर ठीक उसी रुप में दिखाई देता हो। जिस रुप में वह साधारणतः आँखों से देखने पर दिखाई देता है।

धूमिल कहते हैं भारतीय राजनीति में जनतंत्र, समाजवाद, चुनाव, संसद, संविधान जैसे शब्द किस तरह अवमूल्यित होकर अपना अर्थ खो चुके है और अब निरर्थक अर्थ की सृष्टि कर रहे है, धूमिल इस स्थिति से अच्छी तरह से परिचित थे।

जनतंत्र को रास्ता दिखाने की अपेक्षा राहजनी मानते थे। उनका कहना है कि, युवा लेखन के लिए राजनीतिक समझदारी जरुरी है बिना राजनीतिक समझदारी से आज का लेखन संभव नहीं।

तत्वतः विचारों से खंडित धूमिल साठोत्तर कविता के एक महत्वपूर्ण हस्ताक्षर थे। सामाजिक और सांस्कृतिक द्वंद्वों की तीखे ढंग की अभिव्यक्ति उनकी कविता में देखने को मिलती हैं।

राजनीतिक चेतना का इतना उपयुक्त सामंजस्य संभवतः मुक्तिबोध के बाद धूमिल की रचना में ही मिलता हैं। संसदीय राजनीति को सडकपर लानेवाले कवि धूमिल ही है।

सच्चे रुप से देखा जाय तो धूमिल की कविता जनता और जनतंत्र की कविता हैं। उनके कविता के शब्द सामाजिक और राजनीतिक संसार के शब्द है।

धूमिल सामाजिक, राजनीतिक चेतना के कवि थे। साहित्यकार के लिए आवश्यक है कि समाज चित्र जिस रुप देखे उसे अपनी निजी दृष्टि से प्रदान करें। साहित्य का अर्थ सिर्फ भावाभिव्यक्ति का साधन मात्र नहीं है अपिंतु देश को स्वस्त्य बनाना, अज्ञान तथा अंधकार को मिटाना और नवयुग निर्माण करना भी है। परंतु जब राजनीति जन हिस्सेदार बन जाय तब मानवी मुक्ति का होना संभव नहीं।

आज की भारतीय राजनीति किस तरह अराजकतावादी शक्तियों के हाथ का खिलौना बनती जा रही है। राजनीति के असंसदीय आवरण और उसमें फैलनेवाले भ्रष्टाचार राजनेताओं के दामुंहे चरित्र से उबकर वे राजनीति को संसार की सबसे सुंदर वेश्या कहते हैं।

आजादी के गतवर्षों में धूमिल शासकों और पूँजिपतियों के भय और मूल्य को न आजतक समझ सका और न पा सका फिर भी वह प्रसन्नता व्यक्त करता हैं।

"मैने कहा आ-जा-दी
और दौडता हुआ खेतों की ओर
गया जहाँ कताए के कतार
अनाज के अंकुए फूट रहे थे
मैंने कहां - जैसे कसरत करते हुए
बच्चे।" (1)

अंधे अतीत और लंगडे भविष्य को ढोनेवाली यह आजादी क्या सिर्फ तीन थके हुए रंगों का नाम है। धूमिल अपने आपसे सवाल करते हैं। -

"क्या आजादी सिर्फ तीन थके हुए रंगों का नाम है
जिन्हें एक पहिया ढोता हैं
या इसका कोई खास मतलब होता हैं।" (2)

कुर्सी में संवादी भाषण, आश्वासन देनेवाले चेहरे देखकर धूमिल आपसी खिंचतान, उछलकूद, वामपंथी दलों उनकी नीतिपर प्रहार करते हुए राजनीतिक क्रांति का पर्दाफाश करते हैं।

समाज में शोषित, पीडित जनों की सक्रियता बढती गयी तब साहित्य में भी मानव संबंधों के पुर्नगठन का, राजनीति का, और यथार्थवाद का स्वर मुखरित हुआ।

धूमिल ने सिर्फ समाज को नहीं देखा बल्कि समाज के साथ एकाकार होकर गांवों और शहरों में राजनीति व्यवस्था ने जो विद्रूपताएं धारण की है उसका सविस्तर रुप प्रस्तुत किया है।

धूमिल भारतीय प्रजातंत्र की आलोचना करते हैं। भ्रष्ट व्यवस्था के लिए जहां पर वह सरकार को दोषी ठहराता हैं वहाँपर जनता को भी दोषमुक्त नहीं करता। राजनीतिक यथार्थ को कविता का विषय बनाकर धूमिल ने हिंदी कविता को समृध्द किया है। उन्हें ऐसा लगता है कि, देश की जनता अपने नेताओं के बहकावे में आकर शोषित होने के लिए अपनी नियति मान बैठी है।

धूमिल को राजनीति के बारें में जितना कुछ मालुम था या राजीनति की जितनी समझ थी, उतनी समझ अन्य किसी विषय की शायद ही नहीं थी। आज की राजनीतिक स्थिति उनकी विचित्रता धूमिल के मन में अनास्था उत्पन्न करती थी और इसी राजनीति ने उसे अभिव्यक्ति के लिए विवश किया और यही से उनकी कविता में राजनीतिक चेतना का स्वर मुखर हुआ।

कवि को मालुम था कि, यह जो प्रजातंत्र है उनमें कोई कमी महसूस होती हैं। सामाजिक

व्यवस्था ठीक नहीं है। धूमिल अपनी कविता के माध्यम से राजनैतिक मुखौटों तथा समाज में जो दरिन्दें है उनको पहचानती थी। इस सच्चाई का रुप उन्होंने अपनी निम्नलिखीत कविता द्वारा हमारे सामने रखा है। -

"वे सबके सब तिजोरियों के
दुभाषिए है
वे वकील है वैज्ञानिक है
लेखक है कवि है कलाकार है
यानि की
कानून की भाषा बोलता हुआ
अपराधियों का एक संयुक्त परिवार है।" (3)

इस वस्तुस्थिति से राजनैतिक परिप्रेक्ष्य में जब हम धूमिल का असली चेहरा देखते हैं तो हमें यह मालुम होता हैं कि, 'थोडे से व्यंग्यों के लिए सच्चाई की हत्या क्यों? अपनी चारों ओर यह दयनीयता देखकर उन्हें ऐसा लगता हैं कि, इस दुनिया में होना कितना हास्यास्पद है। उन्हें अपने आपपर हँसी भी आती है और कभी-कभी गुस्सा भी करते हैं।

धूमिल जानते थे कि, जब मुर्गी का सिर कट जाता है, तब वह फडफडाती हैं, ऐसी ही स्थिति जनतंत्र की है। यहाँ पर आम आदमी को जनतंत्र के नामपर ठगा जा रहा है। थोथी नारेबाजी और झूठे बयानों का पुलाव परोसा जा रहा है, जिसमें भूख भी नहीं मिट सकती। देश की गरीब जनता को फसाकर स्वार्थ से अपना पेट भरनेवाले राजनीतिज्ञों पर धूमिल ने व्यंग्य से कहा है।

"..... यहां
ऐसा जनतंत्र है जिसमें
जिंदा रहने के लिए
घोडे और घांस को
एक जैसी छूट है।" (4)

धूमिल आगे कहते है -

"दरअसल अपने यहां जनतंत्र
एक ऐसा तमाशा है
जिसकी जान
मदारी की भाषा है।" (5)

धूमिल की कविता भारतीय जनतंत्र की स्थितियों का सीधा साक्षात्कार कराती हैं। राजनैतिक ढोंग, छल, पाखंडी लोग मानव विरोधी हरकतोंपर कडा प्रहार करती हैं।

"मगर मैं जानता हूँ मेरे देश का समाजवाद
मालगोदाम में लटकी हुई
उन बाल्टियों की तरह है, जिसपर 'आग' लिखा है
और उसमें बालू और पानी भरा है।" (6)

भारत के इस संसद और प्रजातांत्रिक के तौर तरीके देखकर धूमिल दुःखी हो जाते हैं। उनका व्यक्तिगत दर्द और अकेलेपन की पीडा से हटकर भ्रष्ट राजनीति, समाज, संसद, वर्गभेद, विसंगतिपूर्ण जीवन जीनेवाले इन सबके मुखौटे उतारने का काम धूमिल ने ही किया है। गरीबी और बेरोजगारी से घिरी जनता के त्रासद अनुभवों को अपने कविता का विषय बनाते हैं।

धूमिल कहते हैं "आज मैं तुम्हें वह सत्य बतलाता हूँ जिसके आगे हर सच्चाई छोटी है। इस दुनिया में भूखे आदमी का सबसे बडा तर्क रोटी है।" बेकारी, बेरोजगारी और भुखमरी के लिए आज की राजनैतिक व्यवस्था ही जिम्मेदार है। रोजगार कार्यालय के बाहर लंबी लाइन में खडे देश के नौजवान आत्महत्या करने के लिए लाचार है।

"युवकों की आत्महत्या के लिए रोजगार दफ्तर भेजकर
पंचवर्षीय योजनाओं की सरल चट्टानों को
कागज से काट रहा हूँ।" (7)

आज मनुष्य को सबसे बडी आवश्यकता रोटी की है। जिसके बारें में हमारी देश की संसद आज भी मौन है। शायद इसी प्रश्न की ओर से जनता का ध्यान हटाने के लिए हमारे देश के नेता चारों ओर हत्या, लूटमार, आगजनी के लिए हमारे देश के नेता सांम्प्रदायिक झगडे और भाषा विवाद खडे कर दंगे करवाते हैं।

"ग्राम सभा की लालटेन का शिशा टूट चुका है
नलकूपों की नलियां झरना हो गयी है।
और पानी की जगह
आदमी का खून रिसता है
गांव की सरहद
पार करके कुछ लोग
बगल में बस्ता दबाकर कचहरी जाते हैं

और न्याय के नाम पर
पूरे परिवार की बरबादी उठा लेते हैं।"   (8)

धूमिल की कविता में गांव और शहर दोनों के विविध चित्र है। भारत की अधिकतर जनता देहात में ही रहती हैं। इसलिए धूमिल अपनी कविता को शहर तक ही सीमित नहीं रखते। उनकी राजनैतिक चेतना अपने देश के लिए सीमित न रखकर वैज्ञानिक युग में देश की राजनीति आंतरराष्ट्रीय राजनीति को सम्प्रभावित करती हैं। वे आंतरराष्ट्रीय गतिविधियों पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं।

"मैं देख रहा हूँ एशिया के दाये हाथों की मक्कारी ने
विस्फोटक सुरंगे बीछा दी है
उत्तर-दक्षिण पूरब-पश्चिम कोरिया वियतनाम
पाकिस्तान इस्त्राइल और कई नाम
उनके चारों कोनोंपर खूनी धब्बे चमक रहें है।"   (9)

धूमिल का कहना है यथार्थ की बाहर की जो परिधि है उसमें सच्चाई है। जनसाधारण के एहसासों से जुडे होने के नाते समूची स्थितिशिलता के कारण धूमिल टुट चुके थे। वे वैचारिक क्रांतिद्वारा परिवर्तन करना चाहते थे।

"क्रांति
यहाँ के असंख्य लोगों के लिए
किसी अबोध बच्चे के
हाथों की जूजी है।"   (10)

मनुष्य नैतिक-अनैतिक - अतिनैतिक की राह पर है, जो कुछ इस समाज में हो रहा है। उसके लिए मनुष्य कितना जिम्मेदार है। स्थिति चाहे जो भी हो राजनीतिक अथवा सामाजिक उसे टकराना तो पडता ही है। लेखक भी इसी स्थिति से टकराते है क्योंकि कोई राजनीतिक या सामाजिक स्थिति स्वतंत्रता मौलिक अधिकार, न्याय, समानता, आदि की व्याख्या अपनी दृष्टिकोन से करती हैं।

आज के भ्रष्ट परिवेश में यदि कोई दुहरे व्यक्तित्व को धारण करके अपनी कविता का विषय बनायें तो वह खुद ब-खुद धूमिल बन जायेगा। उन्होंने सिर्फ आज जटिल जीवन जीनेवाले व्यक्ति का आक्रोश सार्थकता के साथ व्यक्त किया है।

हमारे आस-पास के परिवेश में जो कुरुपता है उस कुरुपता को खुलकर अपनी कविता में अभिव्यक्त किया है। अपराधी को अपराधी कहना बुरे को बुरा कहना अथवा चोर को चोर कहने का

साहस धूमिल ने किया है। उनके अनुसार इस वक्त सच्चाई को जानना विरोध में होना जैसा है।

"इस समझदारी में है
कि, वित्तमंत्री की ऐनक की
कौनसा शीशा कितना मोटा है
और विपक्ष की बेंचपर बैठे हुए
नेता के भाईयों के नाम
सस्ते गल्ले की कितनी दुकानों का
कोटा है।" (11)

धूमिल कहते हैं समाज में जो जडता है उसे मिटा दो। कुंठा को त्याग दो भ्रष्ट व्यवस्था को साहस के साथ विरोध करों। देश के कर्णधार जन मसीहा के प्रतीक नेताओं के चरित्र स्पष्ट शब्दों में व्यक्त करने का साहस किया है। जिन्हें अब तक यह भी मालुम नहीं की उन्होंने राष्ट्रीय हितों को कितना नुकसान पहुँचाया है।

"मैंने राष्ट्र के कर्णधारों को
सडकोंपर
किश्तियों की खोज में
भटकते हुए देखा है।" (12)

धूमिल को ऐसा लगता हैं कि, सत्ताधारी सत्ता से दूर नहीं रह सकते। आवेश के कारण किसी क्षणों के लिए यदि छोड भी दिया तो दूसरे ही क्षण उसका स्वार्थ उन्हें प्रेरित करता हैं। वे फिर सत्ता से जुडने में लग जाते हैं।

"मैं रोज देखता हूँ कि, व्यवस्था की मशीन का
एक पुर्जा गरम होकर
अलग छिटक गया है और
ठंडा होते ही
फिर कुर्सी से चिपक गया है
उसमें न हया है
न दया है।" (13)

उपर्युक्त उध्दरण से हमारी समझ में आता हैं कि, यह सत्ताधारी लोग अपने आपसे नहीं तो कुर्सी से कितना प्यार करते हैं। यह कुर्सीवाला आदमी ऐसा है जिसके दिल में दूसरों के प्रति न दया है न

माया। वह सिर्फ अपना स्वार्थ जताने के लिए कुर्सीपर बैठकर हमें आश्वासन देता हैं।

यह नेता लोग ऊपर से तो हमें खुश करते हैं और अंदर से अपने स्वार्थ के बारें में सोचते हैं। ऐसे यह सत्ताधारी नेता जनता को छोडकर कुर्सी के पास रहना पसंद करते हैं। धूमिल कहते है मेरे देशवासियों 'मैं हिन्दुस्थान हूँ' कहकर मेरे साथ चलो। किंतु 'नट-बोल्ट को अलग होते हुए देखकर उन्हें ऐसा लगता हैं कि 'मैकिनिझम' टुट रहा है और वे भयभीत हो उठते हैं।

"हाँ मैं भयभीत हूँ
व्यवस्था की खोह में
हर तरफ
बूढे और रक्तलोलुप मशालची
घुम रहें है
इतिहास की ताजगी
बनायें रखनें के लिए
नौजवान और सफल
मौतों की टोह में।" (14)

आज जिस प्रजातंत्र में लोग अपनी अटूट आस्था जताते हैं और समाजवाद का प्रतिक मानते हैं, उस प्रजातंत्र में जब हत्याओं का सिलसिला चलता हैं और खून से लथपथ लाश लुढक पडती हैं, उसे देखकर धूमिल का आक्रोश उबल पडता हैं और वे पूछते हैं।-

"खून के थक्के में तलफता हुआ
जब एक युवा जिस्म
गिर पडा रास्ते के ठीक बीचोबीच
उस वक्त जनतंत्र किधर था।" (15)

राजनैतिक चेतना के रुप में "क्रांति का स्वर" जनवादी कवि की चेतस पीडा से उद्‌भूत हैं। कांग्रेसी समाजवाद और पूँजीवादी व्यवस्था के लिए जनतंत्रीय तौर-तरीकों बदलने के लिए लिखा है।

धूमिल एक क्रांतिकारी कवि थे। इसलिए उनकी तीनों कृतिं में क्राति भावोंद्रक देखने को मिलता हैं। जहां धूमिल का विद्रोह समग्र के प्रति होता हैं। उनके निकट व्यवस्था के रुप में भारतीय संसद, जनतंत्र और उसका ढांचा है।

"अब वक्त आ गया है कि, तुम उठो
और अपनी ऊब को आकार दो।" (16)

स्वतंत्रता जिसे राजनैतिक गुण से स्वच्छंद कर दिया जाय तो स्वाधीनता हो जाती हैं। स्वतंत्रता चेतना और उसकी स्वाधिकार की मांग इसमें सिर्फ धूमिल की मनस्थिति नहीं तो सामाजिक मनोदशा का चित्रण है।

उन्होंने अपनी कविता को "संसदीय लेखन" की संज्ञा दी है। धूमिल की आत्मचेतना ही उनकी उन्मुक्ति हैं। कविता में अपने समकालीन जीवन दर्शन को परिभाषित करते हुए विरोध की भूमिका उतरना अस्तित्व बोध को प्रतिष्ठित करने की आत्मशक्ति हैं।

यह बात निर्विवाद माननी चाहिए की वाद या अराजकतावाद धूमिल की कविता की सीमा नहीं है। धूमिल जिस संक्रामक स्थितियों से गुजर रहे थे उनकी परिहार्यता के बावजूद उनकी चेष्टा मानव मूल्यों के प्रति "रक्तपात के मुकाम पर" पहुंचकर अजनबी होने की शुरुआत हैं। उनका कहना है - "आत्मा आँधी है, दुख पीठपर बंधा है और छायाओं में झुलसे हुए चेहरे लेटे हुए है।"

कल भूखे गर्भाशय की ओट से
एक युध्द अपराधी की
घोषणा होगी।" (17)

प्रगतिशील विचारधारा का पोषण करनेवाले समकालीन कवियों में धूमिल का विशेष महत्व है। उनकी कविता में प्रगतिवाद की सर्वाधिक सार्थक एवं जीवंत मूल्यवत्ता मिलती हैं। यथार्थ का जितना तीखापन धूमिल की कविता में मिलता हैं, उतना तीखापन अन्य किसी समकालीन कवि की रचना में नहीं मिलता। संसदीय राजर्नाति अर्थात सदन में चलनेवाली राजनीति को सडकपर लानेवाले धूमिल ही है। उनकी कविता में राजनीतिक जागरुक का यह संकेत द्रष्टव्य है।

"ओ क्रांति की मुंह बोली बहन
जिसकी आँखों से जन्मी है
उसके लिए रास्ता बन।" (18)

धूमिल की कविता सच्चे अर्थों में सडक और संसद अर्थात "जनता और जनतंत्र" की कविता हैं। उनको जितनी समझ समकालीन राजनीति की थी उतनी शायद अन्य किसी विषय की नहीं थी। इसका कारण उसमें थोडी बहुत अनास्थामय वृत्ति थी। समकालीन राजनीतिक प्रखर चेतना के रुप में हम निम्न पंक्तियाँ कह सकते हैं।

"हाँ वही सही है कि, कुर्सियां वही है
सिर्फ टोपियाँ बदल गयी है।" (19)

हर आदमी के मन में आसन के प्रति आसक्ती तो होती हैं। कवि कहते है सिर सलामत रहें तो टोपियां पचास मिलती हैं। इसके उल्टा हम ऐसा कह सकते हैं कि, अगर बैठनेवाला सलामत तो कुर्सियां पचास। इसमें वास्तविकता तो यह है कि, कुर्सी सलामत रहें तो बैठनेवाले पचास होंगे।

स्वाधिनता के पहले राजनीति में कदम रखना त्याग के लिए तैय्यार होना था। परंतु स्वाधिनता के बाद इसका अर्थ कुछ अलग ले रहे थे। उनके मतानुसार स्वाधीतना में प्रवेश करने का मतलब सत्ता का, या भोग का अधिकार स्थापन करना। जब इसका एहसास बुध्दिजीवी तथा साहित्यिकों को हुआ तब उन्होंने भ्रष्ट राजनीति और राजनेता पर व्यंग्य के अस्त्र चलाये। पर तब तक समय हाथ से निकल गया था।

जब से राजनीतिक व्यंग्य लिख जा रहे थे तब से राजनेताओं की सत्ता लोलुपता भाई-भतीजावाद जाँति- पाँति आदि बुराईयों को संकुचित वृत्ति का लक्ष बनाया। इसका कारण यह था कि, राजनीतिक व्यंग्य में राजनेता अज्ञान होनेपर बहुत बार ध्यान दिया जाता हैं। वैसे किसी के अज्ञान की खिल्ली उडाना या उपहास करना एक अपराध करने के बराबर है। अज्ञान केवल नेताओं में नहीं तो समूची जनता के लिए यह अभिशाप के बराबर है।

राजनीतिक बोध में व्यंग्य का स्वर होने के पीछे एक महत्वपूर्ण कारण है। वह कारण राजनेताओं की निरर्थक नारेबाजी है। इसका मतलब यह है कि, जिस चीज को कोई भी अर्थ नहीं होता उस चीज को समाज के सामने प्रदर्शन करना और उसकी तरफ लोगों को आकर्षित करना यह होता हैं। इसमें राजनेताओं का दुबलापन उसकी चरित्रहीनता, सत्ता रखने के लिए की गई सुविधाएं, निर्वाचित प्रतिनिधियोंका अकर्तव्य बोध, क्रांति की भावना इन सबमें निरर्थकता का खूब वर्णन मिलता हैं। एक असहाय सी स्थिति को जन्म देनेवाली राजनीतिक और सामाजिक व्यवस्था को देखकर उन्होंने लिखा है।-

"बीस साल बाद
मैं अपने आपसे एक सवाल करता हूँ
जानवर बनने के लिए कितने सब्र की जरुरत होती हैं?
और बिना किसी उत्तर के चुपचाप
आगे बढ जाता हूँ।" (20)

धूमिल ने जब अपने आपसे बाहर आकर देखा तो उसे वहां वही सबकुछ दिखायी गया जिसे उसने स्वयं में झेला था। यही कारण था कि, उसने यह लिख दिया।

"सिर कटे मुर्ग की तरह फडकते हुए जनतंत्र में
सुबह

सिर्फ चमकते हुए रंगों की चालबाजी है।"   (21)

आस्थाहीनता की स्थिति भी एक बार व्यक्ति को राजनीति और राजनेताओं के प्रति तटस्थता की वृत्ति धारण करना सिखा देती हैं। परंतु धूमिल के मन में इस स्थिति में मात्र कोई चीज सच है तो वह है नफरत।

धुएँ से ढके हुए
आसमान के नीचे
लगता है कि हर चीज
झूठ है
आदमी
देश
आजादी और प्यार
सिर्फ नफरत ही सही है।"   (22)

धूमिल कहते हैं कि, किसी देश की आजादी तब सार्थक हो सकती हैं जब उस देश की जनता सडे-गले को छोडकर या पीछे जो हो गया है उसे ध्यान में रखकर नवनिर्माण की भावना अपने मन में रखकर वर्तमान को आकार देने में जुट जाती हैं। परंतु दुर्भाग्य की बात यह है कि, इस देश की आजादी ऐसा सुखद परिवर्तन जनता में ला सकी। स्वाधीनता के प्राप्ति के लिए विदेशी सत्ता के साथ संघर्ष करने की प्रेरणा युवा पीढी में थी परंतु आजादी म्लिने के बाद कोई महान लक्ष्य इन होनहरों के सामने न था। लक्ष्यहीन, ध्येयहीन, पीढी अकर्मण्य बन गयी और यदि कभी उसमें कुछ कर्म करने के लक्षण दिखाई दिये तो उन कर्मों का उद्देश कोई महान नहीं होता था। धूमिल ने इस विचित्र वर्तमान का कुछ अधिक कठोर शब्दों में वर्णन किया है।

"वर्तमान की वजबजाती हुई सतह पर
हिजडों की एक पूरी पीढी लूप और अंधाकूप के मसले पर
बहस कर रही है।"   (23)

यहाँ स्पष्ट रुप से दिखाई देता हैं कि, जो पीढी अपने वर्तमान को ठीक नहीं कर पायी वह अच्छे भविष्य का निर्माण कैसे कर सकती हैं। कवि अपने समय के युवा पीढी के प्रति क्षुब्द दिखाई देता हैं। कवि के इस आक्रोश का चित्रण हमें निम्नलिखीत पंक्तियों में देखने को मिलता हैं।

मेरा गुस्सा
जनमत की चढी हुई नदी में

एक सडा हुआ काठ है।" (24)

इस देश के शासकोंद्वारा चलाया जानेवाला जनतंत्र बेमानी है। इसके परिणाम अत्यंत भयंकर होते हैं। धूमिल ने बडे साहसिकता से इस जनतंत्र के उसी भयंकर अर्थ का संकेत करते हुए लिखा है।

उन्होंने जनता और जरायमपेशा
औरतों के बीच की
सरल रेखा को काटकर
स्वस्तिक बना लिया है
और हवा में एक चमकदार गोल शब्द
फेंक दिया है जनतंत्र
जिसकी रोज सैंकडों बार हत्या होती हैं
और हर बार
वह भेडियों की जुबानपर जिंदा है।" (25)

राजनेता के चरित्र और चारित्र्य के बारें में धूमिल की धारणाएँ स्फटीक जैसी साफ थी। समग्र राजनीति के बारें में उनका कहना था।

"लाल हरी झंडियां
जो कल तक शिखरों पर पहरा रही थी
वक्त की निचली सतहों में उतरकर
स्याह हो गयी है और चरित्रहीनता
मंत्रियों की कुर्सियों में तबदील हो चुकी है।" (26)

जनकल्याण की भावना से चलाया जानेवाला लोकतंत्र पतन की खाई में गिरा जा रहा है। राजनीति की इस चरित्रहीनता का दोष निवारण किसी भी स्थिति में संभव नहीं लगता। राजनेता के चरित्रहीन होने से देश में रहनेवाले देशवासियों के लिए संकट की स्थिति उत्पन्न होती हैं। गांधीवाद को हत्या, अहिंसा, सत्य, ब्रम्हचर्य, असंग्रह की स्थिति को हास्यास्पद स्थिति में डाल दिया।

जननी जन्मभूमि को देशप्रेम की मूल्यहीनता को स्विकारने पर मजबूर कर दिया। भ्रष्ट राजनीति के कारण उत्पन्न हुई गरीबी ने बडे से बडे जीवन को निरर्थक करके रख दिया है। यह मूल्यहीनता का बोध युवा पीढी में उभरा है। युवकों की उसी तीव्र प्रतिक्रिया का एहसास धूमिल ने इस शब्दों में लिखा है। -

"एकाएक
जंग लगे अचरज से बाहर
आ जाता है आदमी का भ्रम और देशप्रेम
बेकारी की फटी हुई जेब से गिर पडता हैं
मैंने रोजगार दफ्तर से गुजरते हुए
नौजवान को।" (27)

देश की ऐसी दुर्दशा राजनेताओंके चरित्र हीनता के कारण हुई है। इसपर धूमिल का अटल विश्वास है। उनकी कविता में राजनैतिक समझ का जो रुप हमें दिखाई देता हैं वह अनास्थामय था। धूमिल के राजनीतिक बोध के विवेचन प्रसंग में कुछ महान राजनेताओं के प्रति श्रध्दा के भाव थे। राजनेताओं और उनके सत्कार्यों के प्रति धूमिल के मन में आदर था।

स्व. लाल बहादूर शास्त्री के लिए धूमिल के मन में जो आदर की भावना थी उसे उन्होंने अपनी "पटकथा" नामक कविता में प्रकट की है।

"मगर उसके तुरंत बाद
मुझे झेलनी पडी थी सबसे बडी ट्रैजेडी
अपने इतिहास की
जब दुनिया की स्याह और सफेद चेहरों ने
विस्मय से देखा कि ताश्कंद में
समझौते के सफेद चादर के नीचे
एक शांति-यात्री की लाश थी।" (28)

धूमिल को समसामयिक राजनीति की अच्छी पहचान थी। हमारी हर सुविधा-असुविधा का दायित्व हमारी सरकार पर है। धूमिल ने जिन महत्वपूर्ग समस्याओंकी ओर हमारा ध्यान आकृष्ट किया है वह है रोटी की समस्या। यह ऐसी समस्या है जिसपर हमारे देश की संसद मौन है।

आजादी के बाद हमारी अर्थिक क्षेत्र की प्रगति होने की बात को कोई अस्विकार नहीं करता। परंतु इस प्रगति से मिलनेवाले लाभ समाजवाद का झंडा उठाकर चलनेवाली देश की संसद साधारण मनुष्य तक नहीं पहुंच पायी। भूख की समस्या का जड गलत राजनीति में खोजा जा सकता हैं। यदि यहाँ का राजनेता स्वाधीनता के बाद अपना चरित्र बदलकर आदर्श चरित्र को जनता के सामने रखे तो यहाँ की जनता भी टायर की फटी चप्पल पहननेवाले मंत्री को आदर से देखती हैं।

राजनीति परंपराओं, रुढियों, अंधश्रध्दा, और अवैज्ञानिक धारणाओंपर पलती हैं। उसके खिलाफ लडना आसान काम नहीं। इसे व्यवहारिक दृष्टि देकर धूनिल जैसा कवि सुबोध ढंग से समझ सकता हैं।

"और वह सडक
समझौता बन गयी है जिसपर खडे होकर
कल तुमने संसद को
बाहर आने के लिए आवाज दी थी
नहीं अब वहाँ कोई नहीं है
मतलब की इबारत से होकर
सब के सब व्यवस्था के पक्ष में
चले गये है।" (29)

ऐसे राजनेताओं से बनी संसद भला रोटी से खेलनेवाले तीसरे आदमी के बारें में मौन रहेगी तो और क्या करेगी?

राजनीतिक यथार्थ का सर्वाधिक परिचित रुप राजनीतिक घटनाओंके अंकन के रुप में दिखाई देता हैं। गाँव और शहर में राजनीतिक व्यवस्था ने जो समस्याएँ पैदा की है उनपर धूमिल ने विस्तारपूर्वक विचार किया। धूमिल की सहानुभूति हमेशा समाज के दलित एवं शोषित वर्ग के प्रति थी। राजनीतिक यथार्थ को अपनी कविता का विषय बनाकर धूमिलने हिंदी कविता को समृध्द किया।

धूमिल के मन में यह आशा थी की, स्वतंत्र भारत में ऐसी सामाजिक, अर्थिक तथा राजनीतिक व्यवस्था उत्पन्न होगी जिसमें शोषण समाप्त हो जायेगा। रोटी, कपडा और मकान की समस्या सुलझ जायेगी। इतना कुछ होनेपर भी अन्य देशवासियों की तरह धूमिल यह सोचते रहे कि, एक-न-एक दिन यह सब बदलेगा, सबकुछ ठिक हो जायेगा।

"मैं सोचता रहा
और घूमता रहा
टुटे हुए पूलों के नीचे
वीरान सडकोंपर आँखो के
अन्धे रेगिस्तान में
फटे हुए पालों की
अधूरी जल यात्राओं में
टूटी हुई चीजों के ढेर में

मै खोयी हुई आजादी का अर्थ
ढूँढता रहा।"   (30)

धूमिल की राजनीतिक चेतना किसी वाद विशेष के साँचे में नहीं ढली है। उनके विचार संवेदनशील प्रगतिवादी कवि के विचार है। वे कहते है चुनाव एक अधमरा पशु है जिसमें से बदबूदार मवाद बह रहा है। इस पशु के शरीर में जाति, धर्म, और संप्रदाय के कीडे पडे हुए है, लोगों को पता हैं कि, जिन लोगों को वे चुन रहे है वे सब भ्रष्ट है। इस बारें में धूमिल अपनी "चुनाव" नामक कविता में इसका रुप स्पष्ट करते हैं।

"यह आखरी भ्रम है
दस्तेपर हाथ फेरते हुए मैंने कहा
तब तक इसीतरह बातों में चलते रहो
इसके बाद
वादों की दुनिया में धोखा खाने के लिए
कुछ भी नही होगा।"   (31)

"चुनाव" कविता में धूमिल ने स्पष्ट कर दिया है कि, जनतंत्र जनता से नही तो घर की जंग से शुरु होती हैं। "मेरा गाँव" कविता में गांववालों के नन में चुनाव के प्रति कितना उत्साह होता हैं इसका चित्रण किया है।

"सारा माहौल जब एक चुनाव की
तैयारी में मशगुल है
वहां जीवन
अब भी
संसद की कार्रवाई बाहर निकाले गये
वाक्य की तरह तिरस्कृत हैं।"   (32)

धूमिल अपने क्रांतिकारी देशवासियों को रक्त शिखर से प्रस्थान करने के लिए कहता हैं, क्रांति भूख से जन्म लेती हैं, जब पिता अपने बच्चे के भविष्य के प्रति आशंकित होता है और भूख बच्चों को भविष्य में ग्रस्तते देखता हैं।

"पिता के आँखों में फैसले की नमी है
और पूरब में फैली हुई लालिमा
उसके विचारों का रंग बन चुकी है।"   (33)

कवि को ऐसा लगता हैं कि, भूख का रास्ता बंदूक से जुडता हैं। यह भ्रष्ट व्यवस्था नष्ट होनी चाहिए। निराश, हताश लोगों को अपनी दीनता त्यागकर लडने के लिए प्रोत्साहीत करता हैं। कवि युवकों से पूछता हैं।

"क्या सचमुच तुम्हारे गुस्से की बगल में
खडा हो रहा है पत्तो में
बजता हुआ चाकुओं का शोर।" (34)

भारतीयों की अशिक्षा, भाग्यवादिता, रुढिवादिता, सुधार, समझौते की आदत, शांति से लगाव और सदियों की पराधीनता से अर्जित जडता इसके मूल में है। आम आदमी की यह उदासिनता धूमिल को दुःखी करती हैं। धूमिल किसानों की दुर्दशा देखकर द्रवित होता है और पूछता हैं।

"क्या तुमने कभी सोचा कि तुम्हारा
यह जो बुरा हाल है
इसकी वजह क्या है।" (35)

कवि के मन में ऐसी धारणा थी कि, उसके देशवासी चालाक नेताओं के बहकावे में आकर शोषित होने को अपनी नियति मान बैठे है। धूमिल अपने देशवासियों को संबोधित करते हुए जडता को त्यागने और साहसपूर्व भ्रष्ट व्यवस्था का सामना करने की प्रेरणा देते हैं।

"हे भाई हे। अगर चाहते हो
कि हवा का रुख बदले
तो एक काम करो
संसद जाम करने से बेहतर है
सडक जाम करो।" (36)

इसप्रकार कवि जनता को यह प्रेरणा देता हैं कि, इस जडता को त्यागकर संघर्ष की ओर आगे बढो। अपनी जनता की जडता को देखकर धूमिल निराश हो जाते हैं। जनता की ऐसी स्थिति हमारे देश के भ्रष्ट नेताओं ने की है। इस देश का नेतृत्व स्वाधीनता के बाद भी स्वार्थी, धूर्त तथा क्रूर था। देश के नेताओं ने भ्रष्ट हित को किस प्रकार हानी पहुँचाई इस बारें में धूमिल लिखते हैं।

"मगर चालाक सुराजियें
आजादी के बाद के अंधेरे में
अपने पुरखों को रंगीन बलगम
और गलत इरादों को मौसम जी रहे थे

अपने –अपने दराजों की भाषा में बैठकर
"गर्म कुत्ता" खा रहे थे
सफेद धोड़ा पी रहे थे।"   (37)

इसमें धूमिल ने नेताओं को प्रति पूरी घृणा व्यक्त की है। उनका कहना है कि, स्वार्थपरता नेताओंने सिर्फ अपनी सुख सुविधाएँ सुरक्षित की। इनका लक्ष्य राष्ट्रनिमार्ण न होकर सुख सुविधा को जुटाना है।

धूमिलने देश के नेतृत्वपर तीक्ष्ण व्यंग्य अपनी "हत्यारे" नामक कविता में किया है। इसमें कवि का कहना है – नेता अपने दांतो की तरह देशी है। यह नेता गोली दागना भी जानते है और प्रलोभन देना भी। इनकी आत्मा घिसे हुए तत्वों की तरह है जो कि अंधकार के सारे रास्तों से परिचित हैं। इनके चेहरोंपर लालच और क्रुरता नाचती हैं। परंतु फिर भी यह लोग मुस्कुराते हैं। राजनीतिक हत्याएं, भुखमरी, और सांप्रायिक हत्या इनके लिए आम बात की तरह है। यह लोग एक साथ शांति और अनुबम की वकालत करते हैं।

"हत्यारे दो" कविता में धूमिल आधुनिकता नेताओं की चालाकी स्पष्ट करते हुए लिखते हैं –

"कितने ही अनुचर और बोलियां
एक से एक आधुन्कि सभ्य और निरापद तरीके
ज्यादातर वे हथियार की जगह तुम्हें
विचार से मारते हैं।"   (38)

यह नेता लोग जनता को पहले शब्दों के जंगल में भटकते हैं। परंतु जनता को जब उनकी सच्चाई मालुम हो जाती है तब जनता क्रांति के लिए तैय्यार हो जाती हैं।

आम जनता प्रायः निर्णायक क्षणों में ही चूक जाती हैं तब इसका फायदा चालाक नेता जरुर लेते हैं और विरोध के एक – एक शब्द को अपने पक्ष में तोड लेते हैं।

साहित्य का अर्थ सिर्फ भावाभिव्यक्ति का साधन मात्र ही नहीं है। अपितु देश को स्वस्थ बनाना तथा अज्ञान अंधकार को मिटाने और नया युग निर्मान करना भी है। आज की भारतीय राजनीती किस तरह अराजकतावादी शक्तियों के हाथ का खिलौना बनती जा रही है। धूमिल को लगता है कि लोग चुनावों को मेले या त्योहार की तरह लेते हैं। देश में असंख्य रोग है और उसका एकमात्र इलाज चुनाव है।

उसमें जाति, धर्म, भाषा और संप्रदाय के असंख्य किडे पडे हुए है। लोगों को भली भांति पता हैं कि वे जिन्हे चुन रहे है वह सब भ्रष्ट है बेईमान है चोर और मक्कार है तभी तो धूमिल कहते हैं।

सुनो
तुम चाहे जिसे चुनो
मगर इसे नही। इसे बदलों। (39)

राजनीति का इसतरह अव्यवस्थित होने का मतलब आजादी का बिखर जाना ही है। परंतु अब कोई किसी की रोटी नही छीनेगा कोई किसी को नंगा नही करेगा अब यह जमीन अपनी है, आसमान अपना है। किंतु राजनैतिक अमानवीयता को देखकर धूमिल को ऐसा लगता हैं।

जनतंत्र, त्याग, स्वतंत्रता,
संस्कृति, शांति, मनुष्यता
ये सारे शब्द थे
सुनहरे वादे थे
खुशफहम इरादे थे। (40)

'जनतंत्र के सूर्योदय' में कवि हमारे प्रजातंत्र के असली चेहरे को हमारे सामने रखता हैं। देश के नौजवानों का भविष्य फाईलों में बंद कर काले दराजों में दफन कर दिया जाता हैं। भाषा चंद सिक्कों के लिए पूंजीपतियोंके हाथ बिक गई है और आम आदमी अपनी भाषा से वंचित हो गया है।

" तुम चुप रहोगे और लज्जा के
उस निरर्थक गूंगेपन-से सहोगे
यह जानकर कि तुम्हारी मातृभाषा
उस महरी की तरह है जो
महाजन के साथ रातभर

सोने के लिए
एक साडी पर राजी है।"   (41)

प्रजातंत्र में भेदभाव और विषमता इतनी है कि, जिस उम्र में पडोस की महिला युवती दीखती हैं उस उम्र में कवि की मां का चेहरा "झुर्रियों की झोली" बन गया है। जनता के भावों को कवि समझने में पूरी तरह से असमर्थ है क्योंकि उसे लगता हैं कि, जनता अपने दुःखो से भी तटस्थ हो गयी है। क्रांति की बात यहां पर लोग डराने के लिए करते हैं।

"मैं उन्हें समझाता हूँ
वह कौनसा प्रजातांत्रिक नुस्खा है
कि जिस उम्र में
मेरी मां का चेहरा
झुर्रियों की झोली बन गया है
उसी उम्र की मेरी पडोस की महिला
के चेहरे पर
मेरी प्रेमिका की चेहरे सा
लोच है।"   (42)

धूमिल की "प्रौढ शिक्षा" कविता शिक्षा और राजनीति के संबंधों को स्पष्ट करती हैं। देश की राजनीति में जनता का सार्थक हस्तक्षेप शिक्षा के अभाव में असंभव है। प्रौढ शिक्षा कार्यक्रम जनता को शिक्षित करने का उचित प्रयास है। जिन लोगों के मस्तिष्क में सदियों से अज्ञानता का अंधकार छाया हुआ है, उन्हें शिक्षित करना आवश्यक है ताकि चालाक नेताओं के रंगीन नारों में खो न जाए। धूमिल अनपढ किसान को सचेत करता हैं और स्वाभिमानी बनने के लिए प्रेरित करता हैं। इसका एक उदाहरण देखिए -

"इसीलिए मैं फिर कहता हूँ हर हाथों में
गीली मिट्टी की तरह हां-हां मत करो
तनो
अकडो
अमरबोली की तरह मत जियो
जड पकडो।"

बदलो अपने आपको बदलो
यह दुनिया बदल रही है

और यह रात हैं सिर्फ रात
इसका स्वागत करों
यह तुम्हें
शब्दों के नये परिचय की ओर लेकर
चल रही है।"   (43)

धूमिल अपनी 'पतझड' नामक कविता में यह स्पष्ट करना चाहते हैं कि, ऋतु में पेड ही नंगे नहीं होते इन्सान भी असहाय हो जाते हैं। चुनावों के बसंत के पश्चात का पतझड असहाय हो जाता हैं। इस अव्यवस्था में जनतंत्र जलता हैं। मोहभंग की यात्रा से गुजरती युवा पीढी पत्तियां चबाकर जीती हैं। जीवन मूल्यों में पतझड का यह मौसम आत्मीयता को नष्ट करता हैं।

"नक्सलबाडी" कविता में धूमिल प्रजातंत्र में भुखमरी, बेकारी और भ्रष्टाचार पर अपने विचार व्यक्त करते हैं। भूख ही मनुष्य को प्रजातंत्र से बाहर आकर लडना सिखायेगी। भूखा आदमी ही हर प्रकार की रुढियों एवं मृत परंपराओं से लड सकता हैं। दक्षिण पंथी ताकतों की वर्गीय और स्वार्थपूर्ण नैतिकतापर आक्षेप करते हुए कवि कहता हैं कि, -

"क्या मैंने गलत कहा? आखिरकार
इस खाली पेट के सिवा
तुम्हारे पास वह कौनसी सुरक्षित
जगह है जहाँ खडे होकर
तुम अपने दाहिने हाथ की
साजिश के खिलाफ लडोगे।"   (44)

धूमिल की 'पटकथा' स्वाधीन भारत की कहानी है। जिसमें राजनीतिक उथल-पुथल के चित्रों बीचो-बीच हमारे जनतंत्र की कमजोरियों को पिरोया गया है। देश की जनता की मनोस्थिति पर प्रकाश डाला है।

'पटकथा' के प्रारंभ में कवि अपनी शारीरिक एवं मानसिक रुग्णता का चित्रण करता हैं। स्वाधीनता के जोश से भरा कवि लहलहाते खेतों की ओर भागता चला जाता हैं। कवि को अपने चारों ओर एक नया उत्साह और जीवन उमडता दिखाई देता हैं।

"इसतरह जो था उसे मैंने
जी भरकर प्यार किया

और जो नही था

उसका इंतजार किया।" (45)

"सुदामा पांडे का प्रजातंत्र" संग्रह में सुदामा पांडा का प्रजातंत्र – 2, "कोड वर्ड", "संयुक्त मोर्चा," "कर्फ्यु में एक घण्टे की छूट", "मेमन सिंह", "लोकतंत्र", "मेरा गांव", "नौजवान", "जनतंत्र", "मुक्ति का रास्ता", "मतदाता", "चुनाव", "सत्ता का जन्म", "हत्यारे एक", "हत्यारे दो", "लोहसांय", "वापिसी", तथा "खून का हिसाब", ऐसी अनेक कविताएं है जिनका मूल स्वर राजनीतिक है।

"सुदामा पांडे का प्रजातंत्र–2" कविता में कवि अपने देश की प्रजातंत्रीय व्यवस्था से पूरी तरह से उबा हुआ दिखाई पडता हैं।

कवि को लगता हैं कि, जनता और कवि के बीच खाई पैदा करनेवाला सत्ताधारी वर्ग वह वही स्थिति नही आने देना चाहता हैं। जब कि जनता कवि की बात को मानने लग जाये। वास्तव में कवि और जनता दोनों ही शोषित हैं परंतु फिर भी एक दूसरे के विरोध में खडे दिखते हैं। इसका वर्णन धूमिल ने अपनी कविता "संयुक्त मोर्चा" में किया है।

नेताओं की आत्माएं घिसे हुए तल्ले सी हर बुराई के रास्ते से परिचित हैं। वे हत्या करना भी जानते है और प्रलोभन देना भी। राजनीतिक हत्याएं, भूखमरी और सांप्रदायिक हत्याएं उनके व्यवसाय का अंग है। वे नितांत क्रूर, लालची और हत्यारे हैं, जनता के जीवन का हर कार्य उनकी छायासे ग्रसित हैं। नेता लोग आम आदमी की जेब काटकर चुनाव लडते है और चुनाव जीतकर अपनी जेबे भरते हैं।

सत्ता की दलाली करनेवाले बुध्दिजीवी आम–आदमी की अकलपर मिट्टी डालते हैं और उन्हें दुविधाओं में फसाते हैं। कवि आक्रोश युक्त वाणी में पूछता हैं कि जनता का कसूर क्या हैं।

"धुंधआती आंखें पढना चाहती हैं

आजादी का घोषणा – पत्र

किसने चुराई है रोशनी ?

अन्न और वस्त्र कहां है तुम्हारे लिए ?

कहां हैं मेहनतपर जीने का कोल ?

किसने काटे हैं हाथ ?

तुम लगातार सोचते हो – अकेलापन

अब की कवच हैं। (46)

********* 0 *********

xxx अध्याय नं.5 xxx

1. संसद से सडक तक – धूमिल – पटकथा पृष्ठ 99
2. संसद से सडक तक – धूमिल – बीस साल बाद पृष्ठ 10
3. संसद से सडक तक – धूमिल – पटकथा पृष्ठ 126
4. संसद से सडक तक – धूमिल – पटकथा पृष्ठ 105
5. संसद से सडक तक – धूमिल – पटकथा पृष्ठ 105
6. संसद से सडक तक – धूमिल – पटकथा पृष्ठ 127
7. संसद से सडक तक – धूमिल – शान्तिपाठ पृष्ठ 24, 25
8. कल सुनना मुझे – गाँव में कीर्तन पृष्ठ 75
9. संसद से सडक तक – धूमिल – शान्तिपाठ पृष्ठ 25
10. संसद से सडक तक – धूमिल – अकाल दर्शन पृष्ठ 18
11. संसद से सडक तक – धूमिल – मुनासिब कार्रवाई पृष्ठ 84
12. कल सुनना मुझे – धूमिल – एक कविता कुछ सूचनाएँ पृष्ठ29
13. संसद से सडक तक – धूमिल – पटकथा पृष्ठ 125,126
14. संसद से सडक तक – धूमिल – भाषा की रात पृष्ठ 92
15. सुदामा पांडे का प्रजातंत्र – धूमिल – जनतंत्र एक हत्या पृष्ठ 52
16. संसद से सडक तक – धूमिल – पटकथा पृष्ठ 113
17. सुदामा पांडे का प्रजातंत्र – धूमिल – संसद समीक्षा पृष्ठ31
18. सुदामा पांडे का प्रजातंत्र – धूमिल – भूख पृष्ठ 82
19. संसद से सडक तक – धूमिल – पटकथा पृष्ठ 125
20. संसद से सडक तक – धूमिल – बीस साल बाद पृष्ठ9
21. संसद से सडक तक – धूमिल – जनतंत्र के सूर्योदय में पृष्ठ13
22. संसद से सडक तक – धूमिल – भाषा की रात पृष्ठ 87, 88
23. संसद से सडक तक – धूमिल – राजकमल चौधरी के लिए पृष्ठ 31
24. संसद से सडक तक – धूमिल – शान्तिपाठ पृष्ठ26
25. संसद से सडक तक – धूमिल – शहर में सूर्यास्त पृष्ठ 44
26. संसद से सडक तक – धूमिल – शहर में सूर्यास्त पृष्ठ 43
27. संसद से सडक तक – धूमिल – पतझड पृष्ठ 60
28. संसद से सडक तक – धूमिल – पटकथा पृष्ठ 107,108

29. संसद से सडक तक – धूमिल – नक्सलबाडी पृष्ठ 67

30. संसद से सडक तक – धूमिल – पटकथा पृष्ठ 106

31 सुदामा पांडे का प्रजातंत्र – धूमिल – चुनाव पृष्ठ 31

32. सुदामा पांडे का प्रजातंत्र – धूमिल – मेरा गाँव पृष्ठ 48

33. सुदामा पांडे का प्रजातंत्र – धूमिल – नींद के बाद पृष्ठ 80

34. सुदामा पांडे का प्रजातंत्र – धूमिल – प्रस्ताव पृष्ठ 83

35. संसद से सडक तक – धूमिल – प्रौढशिक्षा पृष्ठ47

36. सुदामा पांडे का प्रजातंत्र – धूमिल – वापसी पृष्ठ 72

37. संसद से सडक तक – धूमिल – प्रौढशिक्षा पृष्ठ 46, 47

38. सुदामा पांडे का प्रजातंत्र – धूमिल – हत्यारे दो पृष्ठ 70

39. संसद से सडक तक – धूमिल – पटकथा पृष्ठ 112

40. संसद से सडक तक – धूमिल – पटकथा पृष्ठ 101

41. संसद से सडक तक – धूमिल – जनतंत्र के सूर्योदय में पृष्ठ 13

42. संसद से सडक तक – धूमिल – अकाल दर्शन पृष्ठ 17

43. संसद से सडक तक – धूमिल – प्रौढशिक्षा पृष्ठ48

44. संसद से सडक तक – धूमिल – नक्सलबाडी पृष्ठ 67

45. संसद से सडक तक – धूमिल – पटकथा पृष्ठ 100

46. सुदामा पांडे का प्रजातंत्र – धूमिल – हत्यारे दो पृष्ठ 70